दैनिक भास्कर

Date:04-04-23

संसदीय समितियों की मनरेगा पर चिंता जायज

संपादकीय

चालू वित्त वर्ष में मनरेगा पर बजट राशि में भारी कटौती को लेकर न केवल अर्थशास्त्रियों के एक बड़े वर्ग बल्कि ग्रामीण विकास एवं पंचायती राज पर बनी संसदीय समिति ने भी चिंता व्यक्त की है। कृषि पर बनी समिति ने भी लगातार दस वर्षों से बजट राशि खर्च न करने पर सरकार की आलोचना की थी। समिति ने मनरेगा की उपयोगिता के बारे में पिछले तीन वर्षों का रिकॉर्ड देते हुए कहा कि इस योजना में राशि कम करने का औचित्य नहीं था। समिति ने पूछा कि किस आकलन के आधार पर स्वयं विभाग ने केवल 98 हजार करोड़ रुपए की मांग की और क्यों वित्त मंत्रालय ने वर्तमान बजट प्रस्ताव में उसे घटा कर महज 60 हजार करोड़ कर दिया। समिति का मानना है कि कोरोना काल में यानी 2020-21 और 21-22 के दो वित्त वर्षों में जहां क्रमशः 61,500 करोड़ और 73,000 करोड़ रुपए का प्रस्ताव था, वहीं वास्तविक खर्च 1, 11,500 करोड़ और 99, 117 करोड़ रुपए हुआ । विगत वर्ष भी वास्तविक खर्च 89,400 करोड़ रुपए का रहा। ऐसे में तीन वर्षों के अनुभव के बावजूद बजट सीमित रखना कहीं से उचित नहीं है। समिति के अनुसार इन तीन वर्षों में मनरेगा योजना करोड़ों ग्रामीण बेरोजगारों के लिए आशा की किरण बनी रही। अर्थशास्त्री मानते हैं कि बेरोजगारी अभी भी पूर्ववत है और मनरेगा इस वर्ष भी मददगार होगा। समिति ने विभाग से 'पुरजोर संस्तुति' की है कि वह बेरोजगारी पर जमीनी स्थिति का व्यापक जायजा ले और अधिक राशि आबंटन मांगे। समिति के अनुसार वित्त विभाग को भी पुनर्विचार करके इस राशि को बढ़ाना चाहिए। पिछले एक सप्ताह में दो संसदीय समितियों की चिंता सरकार के लिए खतरे की घंटी है।

दैनिक जागरण

Date:04-04-23

सीबीआइ की साख

संपादकीय

केंद्रीय जांच ब्यूरो के स्थापना दिवस के अवसर पर प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने इस एजेंसी की प्रशंसा करते हुए जिस तरह यह कहा कि भ्रष्टाचार के मामलों की जांच में उसे हिचकने की आवश्यकता नहीं है, उससे यदि कुछ स्पष्ट हो रहा है तो यही कि सीबीआइ के भ्रष्टाचार विरोधी अभियान में और तेजी आने के ही आसार हैं। इसका संकेत इससे भी मिलता है कि उन्होंने विपक्षी दलों पर निशाना साधा। उन्होंने यह संकेत एक ऐसे समय दिया, जब विपक्षी दल और खासकर कांग्रेस यह आवाज उठाने में लगी हुई है कि केंद्रीय एजेंसियों का दुरुपयोग किया जा रहा है। कुछ विपक्षी दल तो इस शिकायत के साथ सड़क पर उतरने के अतिरिक्त सुप्रीम कोर्ट का दरवाजा भी खटखटा चुके हैं। विपक्षी दल कुछ भी कहें, वे राजनीतिक भ्रष्टाचार से इन्कार नहीं कर सकते। नेताओं और नौकरशाहों के भ्रष्टाचार के मामले खत्म होने का नाम नहीं ले रहे हैं। क्या विपक्षी दल यह चाहते हैं कि इन मामलों की जांच न हो अथवा वे इस नतीजे पर पहुंच गए हैं कि राजनीतिक भ्रष्टाचार पर लगाम लग गई है? उनका निष्कर्ष जो भी हो, देश की जनता इसकी अनदेखी नहीं कर सकती कि भ्रष्टाचार के आरोपों से घिरे नेताओं अथवा उनके करीबियों के यहां से अकूत संपदा मिलती रहती है। जनता इससे भी परिचित है कि कुछ नेता और नौकरशाह किस तरह रातों-रात अरबपति बन जाते हैं।

भ्रष्टाचार के खिलाफ सीबीआइ की सख्ती कायम रहनी ही चाहिए, लेकिन इसके साथ ही इस पर विचार भी होना चाहिए कि क्या यह एजेंसी नेताओं-नौकरशाहों और अन्य प्रभावशाली लोगों से जुड़े मामलों की जांच सही तरह कर पा रही है? दावा कुछ भी किया जाए, आम जनता के मन में इस जांच एजेंसी की छवि ऐसी नहीं कि वह रसूख वालों और विशेष रूप से नेताओं के मामलों की जांच तत्परता से कर पाती है और दोषी लोगों को समय रहते सजा दिला पाती है। यह किसी से छिपा नहीं कि ऐसे मामलों की जांच किस तरह लंबी खिंचती रहती है? भ्रष्ट तत्वों को मुश्किल से ही उनके किए की सजा मिल पाती है। यह सही है कि समय के साथ सीबीआइ कहीं अधिक सक्षम हुई है और उसकी कार्यप्रणाली भी बदली है, लेकिन यह प्रश्न अनुत्तरित है कि वह बड़े लोगों के मामलों की जांच में प्रभावी क्यों नहीं सिद्ध हो पाती? यदि सीबीआइ को अपनी छवि में सुधार करना है और जनता के बीच एक प्रभावी जांच एजेंसी के रूप में अपनी पहचान बनानी है तो उसे अपने में कुछ बदलाव करने होंगे। इसी के साथ उसे इस छवि से भी मुक्त होना होगा कि उसका राजनीतिक इस्तेमाल होता है। यह किसी से छिपा नहीं कि अतीत में उसका राजनीतिक इस्तेमाल होता रहा है। इसी कारण एक समय उसे पिंजरे में कैद तोते की संज्ञा दी गई थी।

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date:04-04-23

भारत के सेवा निर्यात की गतिशीलता

अजय शाह, (लेखक एक्सकेडीआर फोरम में शोधकर्ता हैं)

निर्यात की गतिशीलता आज के भारत के लिए खासतौर पर महत्त्व रखती है। इस मामले में दो क्षेत्र एकदम अलग नजर आते हैं आईटी निर्यात और अन्य कारोबारी सेवाएं। ये दो ऐसे क्षेत्र हैं जहां भारत का प्रदर्शन अच्छा रहा है। इनका आकार उल्लेखनीय हो रहा है। निजी और सरकारी क्षेत्रों के निर्णय लेने वाले इस व्यापक रुझान से लाभान्वित हो सकते हैं।

खपत, निवेश और सरकारी व्यय, सभी को कठिन परिस्थितियों का सामना करना पड़ रहा है। भारत में सेवा निर्यात सबसे उम्मीद भरा क्षेत्र है। भारत में निर्यात का आकलन अमेरिकी डॉलर में करते आए हैं ताकि मुद्रास्फीति की समस्या आड़े न आए। परंतु अमेरिका में भी हाल के वर्षों में मुद्रास्फीति की स्थिति ठीक नहीं रही है। इसलिए हमने 2012 के अमेरिकी डॉलर के वास्तविक संदर्भों में मूल्यांकन किया है।

निर्यात कुल मिलाकर 2.9 फीसदी (मुद्रास्फीति समायोजित अमेरिकी डॉलर में) की चक्रवृद्धि दर से बढ़ा। इसे दोगुना होने में तकरीबन 23 वर्ष की अवधि लगेगी, वहीं वस्तु निर्यात सालाना 1.2 फीसदी की चक्रवृद्धि दर से बढ़ा जो इस दर से 56 वर्ष में दोगुना होगा।

निर्यात की गतिशीलता सेवा क्षेत्र में निहित है। सेवा क्षेत्र कुल निर्यात सालाना 5.7 फीसदी की चक्रवृद्धि दर से बढ़ा जो इस गति से 12 वर्ष में दोगुना होगा। यहां महत्त्वपूर्ण बात है अन्य कारोबारी सेवाएं जो सालाना 8.7 फीसदी की चक्रवृद्धि दर से बढ़ी, जो आठ वर्ष में दोगुना होगी।

भारत को काफी लंबे समय से आईटी और आईटी सक्षम सेवा क्रांति के लिए जाना जाता है। सिटीकॉर्प ओवरसीज सॉफ्टवेयर लिमिटेड (सीओएसएल) सन 1980 के दशक के मध्य में एसईईपीजेड में फलफूल रही थी और इन्फोसिस का आईपीओ सन 1994 में आया। लेकिन अब जबकि उस दौर के दिग्गज भी अपने-अपने करियर के एकदम आखिरी पड़ाव पर पहुंच रहे हैं, आईटी क्रांति के तोहफे लगातार सामने आ रहे हैं। आईटी सबसे बड़ा उद्योग बन गया है और उससे होने वाले निर्यात में लगातार इजाफा जारी है। भारत में सबसे महत्त्वपूर्ण आर्थिक विचार है भारतीय मानव संसाधन के ऊपरी क्रम का इस्तेमाल करके उत्पादन के लिए सस्ते श्रमिकों की तलाश करना और आर्थिक सहयोग एवं विकास संगठन यानी ओईसीडी के सदस्य देशों में उसकी बिक्री करना।

आईटी तथा 'अन्य कारोबारी सेवाओं' को शामिल करने पर हमारा सालाना निर्यात करीब 310 अरब डॉलर का है। अकेले इन दोनों क्षेत्रों से सालाना 300 अरब डॉलर का निर्यात हासिल करना एक अत्यंत उल्लेखनीय संभावना है। भारतीय अर्थव्यवस्था के आकार को देखें तो यह आंकड़ा बहुत बड़ा है।

इसका निजी क्षेत्र के लिए भी बहुत महत्त्वपूर्ण अर्थ है। फिर चाहे हमें गैर वित्तीय कंपनियों की कारोबारी योजना पर विचार करें या फिर वित्तीय कंपनियों को लेकर उद्योग जगत के एक्सपोजर पर, यह परिदृश्य निर्यात आधारित आईटी और आईटी सक्षम सेवाओं के महत्त्व पर जोर देता है। फिर चाहे यह प्रत्यक्ष रूप से हो या सहवर्ती कार्यक्रमों की सहायता से।

सेवा निर्यात की इस कहानी में दरें निर्धारित करने वाला कदम मानव संसाधन में निहित है। इस श्रम शक्ति के सभी तत्त्व ज्ञान की पर्याप्तता की समस्या से जूझ रहे हैं। आम लोग, सेवा नियोक्ता और ज्ञान आधारित संस्थानों को ज्ञान को हासिल करने और फैलाने पर जोर देने की आवश्यकता है ताकि देश में बड़ी तादाद में ऐसे लोग तैयार हो सकें जो विकसित अर्थव्यवस्था वाले देशों में इंजीनियरिंग तथा अन्य क्षेत्रों में उच्च रोजगार हासिल कर सकें। आवश्यकता इस बात

की है कि सरकार इस क्षेत्र में प्रतिस्पर्धी शोध को लेकर फंडिंग मुहैया करा सके जो स्वायत्त अथवा निजी ज्ञान संस्थानों को दी जा सकती है। यह काम बिना प्रबंधन के नियंत्रण, केंद्रीकरण अथवा नियमन के होना चाहिए।

वस्तु निर्यात के क्षेत्र में कमजोर प्रदर्शन नीति निर्माताओं द्वारा विगत 20 वर्षों में अपनाए गए तौर तरीकों को लेकर सवाल पैदा करता है। वैश्विक व्यापार में भारत की हिस्सेदारी में इजाफा हुआ है। यह इजाफा चीन के साथ दुनिया की संबद्धता में आई कमी के साथ ही देखने को मिला है लेकिन यह पहलू निर्यात की सफलता के लिए पर्याप्त नहीं है। जरूरत इस बात की है कि रणनीतिक सोच अपनाया जाए और नीतियों को नए सिरे से तैयार किया जाए।

कर व्यवस्था में बड़े पैमाने पर बदलाव की आवश्यकता है। उदाहरण के लिए उपकरों को समाप्त करना और आयात पर एकदम सहज जीएसटी तथा निर्यात पर कोई जीएसटी न होना। मुक्त व्यापार समझौतों (एफटीए) को लेकर हो रही गतिविधियों के कारण व्युतक्रम शुल्क ढांचे (वह ढांचा जहां इनपुट पर लगने वाले कर की दर आउटपुट पर लगने वाले कर की दर से अधिक होती है) के कारण अनेक प्रकार की विषमताएं उत्पन्न हो रही हैं। सन 1991 से 2011 के बीच के दौर में व्यापार गतिरोधों को एकपक्षीय ढंग से हटाने का रुख उल्लेखनीय है क्योंकि भारत के लिए महत्त्वपूर्ण निर्यात केंद्रों में व्यापार गतिरोध कम हैं और भारत के लिए एफटीए से चाहने को कुछ खास नहीं है।

एक काम जो भारत से होने वाले निर्यात में एकदम सहजता से मदद कर सकता है वह है हर प्रकार के सीमा शुल्क और उपकरों को समाप्त करना। वस्तु उत्पादकों और सेवा उत्पादकों दोनों को कच्चे माल के लिए कम कीमत चुकाने से लाभ मिलेगा। साथ ही जीरो रेटिंग के चलते उन्हें जीएसटी का पूरा रीफंड भी मिलेगा। इसके अलावा नीति निर्माताओं को भी खुद को नए सिरे से तैयार करना होगा ताकि भारत में काम करने वाली कंपनियों को भारत में होने वाली कठिनाइयों से निजात दिलाई जा सके। इसमें कर प्रशासन, पूंजी नियंत्रण, विदेशों में काम करने में मिलने वाली आर्थिक स्वायत्तता, विदेशी श्रमिक, एफएटीएफ/पीएमएलए, कंपनी अधिनियम का बोझ, श्रम कानून, नियामक आदि शामिल हैं।

पारंपरिक तौर पर हमारी समझ यह कहती है कि मजबूत विकास, मजबूत सरकारी संस्थानों की मौजूदगी में ही संभव है। चीन और भारत में वृद्धि उस समय एक पहेली बन कर सामने आई जब कमजोर संस्थानों के होते हुए भी वृद्धि देखने को मिली। यह पहेली तब हल हुई जब देखा गया कि वृद्धि टुकड़ों में अर्थव्यवस्था के उन हिस्सों में देखने को मिली जहां सरकार के साथ संबद्धता कम थी। चीन में ऐसा एसईजेड में हुआ जहां चीन की सरकार ने स्वायत्तता प्रदान की थी। भारत में ऐसा सेवा निर्यात में हुआ जहां भारतीय श्रम शक्ति वैश्विक अर्थव्यवस्था से संबद्ध है और सरकार से उसका संपर्क सीमित है।

क्या और अधोसंरचना इसमें मददगार होगी? सन 1990 के दशक तथा 2000 के दशक के सुधारों ने ब्रॉडबैंड के विस्तार में मदद की और सेवा निर्यात क्रांति की जमीन तैयार की। यह बात अधोसंरचना के पक्ष में पारंपरिक दलीलों के साथ जाती है। लेकिन निजी निवेश 2011 में चरम पर पहुंचा। यही वह समय था जब भौतिक अधोसंरचना में भी सुधार हो रहा था। यहां निर्यात की सफलता और बेहतर अधोसंरचना के रिश्ते को लेकर सवाल पैदा होता है।

Date:04-04-23

जीवाश्म ईंधन से दूरी बनाना जरूरी

सुनीता नारायण, (लेखिका सेंटर फॉर साइंस ऐंड एन्वायरनमेंट से संबद्ध हैं)

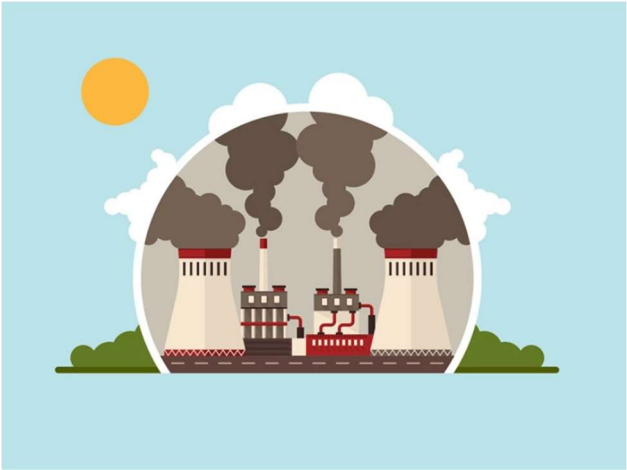

जब कोयला और प्राकृतिक गैस दोनों जीवाश्म ईंधन हैं तो इनके बीच अंतर करने का क्या तुक है? मैंने अपने स्तंभ के पिछले अंक में यह प्रश्न पूछा था क्योंकि यह जलवायु न्याय से जुड़ा हुआ प्रश्न है और उससे भी महत्त्वपूर्ण बात, यह उस गति और पैमाने की व्यवहार्यता से जुड़ा हुआ है जिस गति से जीवाश्म ईंधन पृथ्वी के गर्म होने के लिए जिम्मेदार है। तथ्य यह है कि दुनिया की आबादी के करीब 70 फीसदी ने कार्बन उत्सर्जन में योगदान नहीं दिया है लेकिन आज यह आबादी ऊर्जा के लिए कोयले पर बहुत हद तक निर्भर है। अमीर देशों ने कोयले से प्राकृतिक गैस का रुख कर लिया है जो अपेक्षाकृत स्वच्छ है। प्राकृतिक गैस, कोयले की तुलना में मीथेन के अलावा लगभग आधी कार्बन डाईऑक्साइड छोड़ती है। परंतु ऊर्जा की उनकी आवश्यकता को देखते हुए समझ सकते हैं कि इन देशों ने अतीत में बहुत अधिक उत्सर्जन किया और अभी भी कर रहे हैं। यह वैश्विक कार्बन बजट में उनकी हिस्सेदारी की तुलना में एकदम असंगत है। अब स्वच्छ ऊर्जा में बदलाव का बोझ उन देशों पर है जो उत्सर्जन के लिए सबसे कम जिम्मेदार हैं और इस बदलाव की दृष्टि से भी सबसे कम सक्षम हैं। यह न केवल अनुचित है बल्कि हकीकत से दूर भी है। यह बात जलवायु परिवर्तन से लड़ाई को और अधिक कठिन बनाती है।

मौजूदा वैश्विक प्रयास दो स्तरों पर हो रहे हैं। पहला, गरीब देशों में कोयला आधारित ताप बिजली परियोजनाओं को वित्तीय सहायता बंद करना। दूसरा, ताप बिजली घरों को बंद करने और नवीकरणीय ऊर्जा की ओर बढ़ने के लिए वित्तीय सहायता उपलब्ध कराना। जी7 देशों के जस्ट एनर्जी ट्रांजिशन पार्टनरशिप (जेईटी-पी) में अब दक्षिण अफ्रीका, इंडोनेशिया और वियतनाम शामिल हैं। अभी इस बात पर चर्चा जारी है कि क्या जेईटी-पी बदलाव के लिए जरूरी मात्रा में फंड मुहैया करा सकेगी। नई नवीकरणीय ऊर्जा परियोजनाओं की लागत अभी भी कोयला आधारित परियोजनाओं की स्थापना लागत से दो से तीन गुनी है। यह स्थिति तब है जबकि सौर और पवन ऊर्जा की लागत में लगातार कमी की गई है। यानी जब तक वित्तीय मदद जरूरत के मुताबिक नहीं होगी तब तक स्वच्छ ऊर्जा की दिशा में अपेक्षित बदलाव देखने को नहीं मिलेगा।

ऐसे में क्या विकल्प शेष हैं? आइए भारत के संदर्भ में बात करते हैं जहां हमें कोयले को जलाने के कारण प्रदूषित हो रही हवा की समस्या से निपटना है। वैश्विक राजनीति की स्थिति चाहे जितनी खराब हो हम कोयले का बचाव करने वाल नहीं बन सकते। स्थानीय वायु प्रदूषण को कम करना और जलवायु परिवर्तन का मुकाबला करना हमारे हित में है। लेकिन हमें ऐसा करते समय अपने हितों को ध्यान में रखना होगा। हमारी रणनीति ऐसी होनी चाहिए कि हम देश में विद्युतीकरण की दर बढ़ाएं ताकि हम अपने लाखों औद्योगिक बॉयलरों में कोयले की खपत को कम कर सकें। ये बॉयलर

किफायती नहीं रह गए हैं और बहुत अधिक प्रदूषण फैला रहे हैं। हमें गाड़ियों को भी बिजली चालित बनाने की ओर बढ़ना होगा ताकि शहरों में प्रदूषण को कम किया जा सके।

लाख टके का सवाल यह है कि यह बिजली आखिर उत्पन्न कैसे होगी? यहां हमें जेईटी-पी को शामिल करना चाहिए। हमारा पहला काम है कोयले पर निर्भरता कम करन जबकि इस बीच हम ऊर्जा आपूर्ति में इजाफा कर रहे हैं। इसका अर्थ यह है कि भारत सरकार ने जो कदम उठाने की प्रतिबद्धता जताई है, उसी दिशा में हमें और आगे बढ़ना होगा। कोयले के इस्तेमाल को सीमित करने और स्वच्छ प्राकृतिक गैस तथा नवीकरणीय ऊर्जा में निवेश करना है। देश के ऊर्जा मिश्रण में कोयले से बनने वाली बिजली की निर्भरता को 70 फीसदी से कम करके 50 फीसदी करना है। इसके लिए नवीकरणीय ऊर्जा के लक्ष्य को 2030 तक 450 गीगावॉट से बढ़ाकर 650 से 700 गीगावॉट करना होगा। इस पैमाने पर बदलाव लाने के लिए काफी धन की जरूरत होगी, खासतौर पर अगर हमें नवीकरणीय ऊर्जा की नई क्षमताओं की लागत को कम रखना हो ताकि ऊर्जा की कीमत कम रह सके। यहां अंतरराष्ट्रीय साझेदारी की जरूरत पड़ सकती है। वित्तीय लागत कम करने और अतिरिक्त वित्तीय सहायता हासिल करने, दोनों कामों में उसकी जरूरत पड़ेगी। जेईटी-पी को इस पर ही ध्यान देना चाहिए ताकि किफायती दरों पर धन जुटाया जा सके और भविष्य में स्वच्छ ऊर्जा मिल सके।

यह सवाल फिर भी बाकी है कि हम मौजूदा कोयला संयंत्रों का क्या करेंगे? हमें इन संयंत्रों को भी स्वच्छ बनाने का प्रयास करना होगा। केंद्र सरकार के पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्रालय ने 2015 में मानक उत्सर्जन को लेकर जो अधिसूचना जारी की थी उसे लागू करने में और टालमटोल नहीं करनी चाहिए। इससे मौजूदा बिजली संयंत्रों से होने वाले स्थानीय वायु प्रदूषण में कमी आएगी। हमें प्राकृतिक गैस आधारित बिजली संयंत्रों का भी रुख करना चाहिए। हमारे देश में 20 गीगावॉट क्षमता ऐसी है जिसका परिचालन नहीं हो रहा है, उसे गति देने की आवश्यकता है। इसके लिए हमें सस्ती दरों पर प्राकृतिक गैस चाहिए और हमारी यही मांग होनी चाहिए। इसके अलावा हमें यह देखना होगा कि मौजूदा कोयले का कैसे बेहतर इस्तेमाल किया जाना चाहिए? पुराने संयंत्रों को बंद किया जाना चाहिए लेकिन इसके लिए ऐसी योजना तैयार करनी चाहिए जिससे श्रम और भू संसाधनों का स्वच्छ ऊर्जा में सही इस्तेमाल हो सके।

वैश्विक समुदाय को अपने प्रस्तावों पर नए सिरे से काम करने की जरूरत है। पहले जेईटी-पी को स्वच्छ ऊर्जा बदलाव के लिए सक्षम बनाना होगा। इसे नई अधोसंरचना को स्वच्छ बनाने और जलवायु परिवर्तन के लिहाज से बेहतर बनाने के लिए इस्तेमाल किया जाना चाहिए। इसका मतलब यह हुआ कि वित्तीय सहायता की लागत को उभतरे बाजारों के अनुकूल बनाना। वैश्विक ऊर्जा परिवर्तन की प्रक्रिया में कोयला और प्राकृतिक गैस आदि सभी शामिल होने चाहिए। इससे न केवल यह पता चलेगा कि अमीर देशों का प्राकृतिक गैस का कोटा खत्म हो चुका है बल्कि उभरती अर्थव्यवस्था वाले देशों को किफायती दर पर गैस भी उपलब्ध होगी। ये देश वैश्विक तथा स्थानीय उत्सर्जन की दोहरी समस्या से जूझ रहे हैं। जलवायु परिवर्तन का विज्ञान समावेशन और जवाबदेही की राजनीति भी है। हमें इस बात को समझना होगा।

जनसत्ता

Date:04-04-23

खुशहाली के पैमाने पर सवाल

रवि शंकर

हाल ही में 'यूएन सस्टेनेबल डेवलपमेंट सल्यूशन नेटवर्क' ने विश्व खुशहाली रिपोर्ट 2023 जारी की। यह रिपोर्ट डेढ़ सौ से अधिक देशों के सर्वेक्षण के आधार पर जारी की जाती है। इस वर्ष रिपोर्ट में एक सौ छत्तीस देशों को शामिल किया गया। इसमें खुशहाली को मापने के लिए छह प्रमुख कारकों का उपयोग किया जाता है- सामाजिक सहयोग, आय, स्वास्थ्य, स्वतंत्रता, उदारता और भ्रष्टाचार की स्थिति। एक बार फिर 'वैश्विक खुशहाली सूचकांक' में फिनलैंड सर्वोच्च स्थान पाने में कामयाब रहा। इसे लगातार छठवीं बार सर्वोच्च स्थान मिला है। डेनमार्क दूसरे और तीसरे स्थान पर आइसलैंड है।

पिछले वर्ष की तरह इस वर्ष भी शीर्ष बीस देशों के आंकड़ों में कुछ विशेष परिवर्तन नहीं हुए हैं। एक छोटा-सा परिवर्तन यह है कि लिथुआनिया ने बीसवें स्थान पर पहुंच कर शीर्ष बीस में अपनी जगह बना ली है। वहीं भारत एक सौ छत्तीस देशों की सूची में एक सौ पच्चीसवें स्थान पर है। जबकि इस सूची में पिछले साल एक सौ छियालीस देश शामिल थे, तब भारत को एक सौ पैंतीसवें स्थान पर रखा गया था। पिछली बार के मुकाबले भारत की 'रैंकिंग' में सुधार जरूर हुआ है, लेकिन सूची में उसका नाम नेपाल, चीन और बांग्लादेश जैसे अपने पड़ोसी देशों से भी नीचे है। यहां तक कि जंग लड़ रहे रूस और यूक्रेन भी इस सूची में भारत से आगे हैं। रूस सत्तरवें और यूक्रेन बानबेवें पायदान पर है। इस मामले में अफगानिस्तान सबसे निचले पायदान पर है या कहें कि रिपोर्ट के मुताबिक, यह सबसे ज्यादा दुखी देश है। इसके अलावा पायदान में नीचे रहने वाले देशों में लेबनान, जिम्बाब्वे, डेमोक्रेटिक रिपब्लिक आफ कांगो जैसे देश हैं। शीर्ष बीस देशों की सूची में एशिया का एक भी देश शामिल नहीं है।

खुशहाली सूचकांक में किसी देश की स्थिति जानने के लिए उसकी जीडीपी, वहां जीवन की गुणवत्ता और जीवन प्रत्याशा को देखा जाता है। जाहिर है, इस रिपोर्ट में वही मानक रखे गए हैं, जिन्हें लोगों को एक सामान्य जीवन जीने के लिए न्यूनतम माना गया है, पर अफसोस कि भारत इन पर खरा नहीं उतर पाया और हमारे पड़ोसी देश, जो खुद ही अपनी आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक मुश्किलों और बदहाली से जूझ रहे हैं, वे खुशहाली के मामले में भारत से आगे निकल गए। सवाल है कि हम प्रसन्न समाजों की सूची में क्यों नहीं अव्वल आ पा रहे हैं। इस पर आत्ममंथन की जरूरत है।

खुशहाली सूचकांक के लिए अर्थशास्त्रियों और विभिन्न क्षेत्रों के विशेषज्ञों की एक टीम व्यापक स्तर पर शोध करती है। यह टीम समाज में सुशासन, प्रति व्यक्ति आय, स्वास्थ्य, जीवित रहने की उम्र, भरोसा, सामाजिक सहयोग, परोपकार, दान भावना, स्वतंत्रता और उदारता आदि को आधार बनाती है। रिपोर्ट का मकसद विभिन्न देशों के शासकों को आईना दिखाना है कि उनकी नीतियां लोगों की जिंदगी खुशहाल बनाने में कोई भूमिका निभा रही हैं या नहीं?

खैर, दुनिया में खुशहाली मापने की यह रिपोर्ट कुछ संदेह पैदा करती है। पिछले साल भारत से ऊपर जिन देशों को रखा गया था, उनमें कई देश राजनीतिक और आर्थिक संकटों से जूझ रहे थे। जैसे, मैक्सिको को छियालीसवां स्थान दिया गया था। दुनिया जानती है कि यह देश सालों से आंतरिक मादक पदार्थ के युद्ध में फंसा हुआ है। वहां इतनी गरीबी है कि उसके नागरिक बेहतर जिंदगी की तलाश में अमेरिका में अवैध घुसपैठ करते हैं। इसलिए अमेरिका को मैक्सिको के साथ लगने वाली अपनी अंतरराष्ट्रीय सीमाओं पर दीवार खड़ी करनी पड़ गई थी। ऐसे ही, पिछले साल चीन को बहत्तरवां स्थान दिया गया था। क्या यूरोप और अमेरिका इस बात से अनजान हैं कि उनके देशों की बड़ी से बड़ी तकनीकी कंपनियां चीन में व्यापार नहीं कर सकतीं? वहां बीते सात दशक से लोकतंत्र नहीं है और एक ही पार्टी की सरकार है। चीन की

कम्युनिस्ट पार्टी ने हांगकांग, तिब्बत, ताइवान, और मंगोलिया में जातीय जनसंहार किए हैं। जिन पर अमेरिका और यूरोप के तमाम विश्वविद्यालयों के शोध उपलब्ध हैं। यही नहीं, कोरोना से पूरी दुनिया में मौतों का अकेला जिम्मेदार चीन था और आज भी वह इस महामारी से उबर नहीं सका है।

पिछले साल की रिपोर्ट में गृहयुद्ध और आतंकवाद से ग्रस्त लीबिया को छियासीवां, कैमरून को 102वां, नाइजर को 104वां, नाइजीरिया को 118वां, माली को 123वां, चाड को 130वां, इथोपिया को 131वां और यमन को 132वां स्थान दिया गया था। जबकि पाकिस्तान और श्रीलंका अपने दौर के सबसे बड़े वित्तीय संकट से गुजर रहे हैं और उन्हें क्रमश 121वां और 127वां स्थान दिया गया था।

इस साल भी यही सब देश भारत से आगे हैं। सबसे आश्चर्यजनक तो यूक्रेन का स्थान है। पिछली बार जब वह रूस के खिलाफ युद्ध लड़ रहा था, तब उसे अट्ठानबेवां स्थान दिया गया था। आज भी वह जंग लड़ और दुनिया से मदद मांग रहा है। फिर भी यूक्रेन की खुशहाली पहले से बढ़ गई है। इस बार की रिपोर्ट में यूक्रेन को बानबेवें पायदान पर रखा गया है। क्या इससे बड़ा कोई पाखंड हो सकता है?

हालांकि देखा जाए तो इन देशों की जगह भी कोई खास अच्छी नहीं है, लेकिन विषम हालात के बावजूद भारत से अच्छी है। जबकि भारत में न तो कोई आर्थिक संकट है, न यह युद्ध से ग्रस्त है और न ही यहां राजनीतिक अस्थिरता है। कोरोना महामारी से निपटने में भी हमारी सरकारों की सकारात्मक भूमिका रही है। सवाल है कि अगर सकल घरेलू उत्पाद खुशी को मापने का पैमाना है, तो उस पर भी कैसे सवा सौ देश भारत से बेहतर हो सकते हैं? अगर भ्रष्टाचार में कमी या उसकी गैरमौजूदगी खुश होने का आधार है, तो अफ्रीका और लैटिन अमेरिका के देश कैसे भारत से बेहतर हैं? असल में जिन छह पैमानों पर खुशी को मापा गया है, वे अपने आप में अधूरे हैं। यह रिपोर्ट एक राजनीतिक एजेंडे से ज्यादा कुछ और नहीं नजर आती।

यह माना जा सकता है कि भारत में खुशहाली को बढ़ावा देने में यहां की जनसंख्या सबसे बड़ी बाधा है। भारत में कई तरह का भारत है। एक अमीर और खुशहाल भारत है, तो उसमें एक गरीब भारत भी है। गरीब भारत भी विकास कर रहा है, लेकिन आबादी इतनी ज्यादा है कि अभी देश को समग्रता में खुशहाल देशों में अव्वल स्थान बनाने में वक्त लगेगा। सबसे खुशहाल देश फिनलैंड की आबादी महज पचपन लाख है, उसके लिए विकास आसान है। भारत के मुंबई, दिल्ली, कोलकाता जैसे शहरों में इससे कहीं ज्यादा लोग रहते हैं। खुश देशों की सूची में दूसरे स्थान पर रहे डेनमार्क में 58.6 लाख लोग रहते हैं, तीसरे स्थान के देश आइसलैंड में तो महज 3.73 लाख लोग होते हैं। ऐसे में इन देशों से भारत की तुलना नहीं की जा सकती है।

देश में पिछले नौ वर्षों में केंद्र सरकार द्वारा लोगों के जीवन में बदलाव लाने के लिए कई योजनाएं क्रियान्वित की गई हैं, जिनका लाभ लोगों को मिल रहा है। भारत की गिनती इस समय विश्व के सबसे युवा देश में हो रही है। फिर भी 'वैश्विक खुशहाली सूचकांक' में भारत को कमतर आंकना सवाल खड़े करता है। निश्चित ही वैश्विक स्तर पर खुशहाली का यह सूचकांक देश के बहुआयामी विकास का एक आईना है। देश के समावेशी विकास को अगर यह आईना झुठलाता है तो इस विषय पर गंभीर चिंतन-मनन की आवश्यकता है।